IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 24, Issue 1, Ser. 9 (January. 2019) 81-84
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

आधुनिक काल में वैदिक शिक्षा की प्रासंगिकता
(Vedic Education System for Modern Time)

आलोक कुमार द्विवेदी
शोध छात्र, (जे0आर0एफ0) दर्शनशास्त्र
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

The Vedas are a large body of knowledge text originating in the ancient Indian subcontinent. Vedas are also a guide to live a successful and real life. There are two major aspects of life- one is external and other is internal. Vedic education system was beautifully designed to balance between both these aspects. In Vedic period education was provided in "gurukula". It was unique system of education. Students used to go in gurukulas and there "gurus" provided them the holistic knowledge, meaning knowledge related with every aspect of life. Especially moral education was a permanent aim of Vedic education. The function of school was not only to make to students knowledgeable but also to make them well cultured. Thus the Vedic education system has both the characters employment oriented and character building.

However, with industrialization, it is thought that the moral education has lost its root. We are living in an age of rapid scientific and technological change. We also do not deny that the changes have varying impact on different social groups within the same society and across different societies. We have largely ignored.

(1)

The ideals of truth in search of material life. Now-a-days it is a big problem for institutions to educate students in which they can deal with the problem of balancing between material and moral life. The principle of Vedic education system has been a source of inspiration to all the education system of the world. The following Vedic 'shloka' gives the solution for described problem.

"OM, ISHAVASYAM IDAM SARVAM YAT KINCH JAGATYAM JAGAT
TEM TYAKTEN BHUNJEETHA MAA GRUDHHA KASYASVIT DHANAM"

(The entire universe is owned by all pervading energies. Enjoy all but with a spirit of renunciation. Do not get attached to them either, neither have desire to possess the wealth of others)

In this paper I plan to provide a glimpse on how Vedic education system can balance among values, material life and industrialization effect.

It is truly said that what would be the nature of society, it will depend how our education system is. Now-a-days society is facing many problem as social, environmental, ethical, etc. In today's society material life is dominating factor now, which has also been included in present education system. This leads to a greed-based.

Individualistic, self-centered, and emotionally vulnerable society. These are some of the major issues because of which the society faces value crises. Every person always thinks only for himself/herself. The Vedic education system has its solution. The Vedas urge people to assemble on a common platform to think together and to work together for achieving a common goal. In Vedic era education was must for everybody for becoming cultured. If we want a better society, with civilized people who are ready to make contributions to the society according to their abilities. It is necessary to make moral education based on Vedic educational model. In this paper, I plan to argue that Vedic education provides us a platform where the whole world has a common goal.

Another special characteristic of Vedic education system was its inter disciplinary format. Now-a-days we are facing huge environmental problems. In Vedic education system it was taught that we all are inter connected and inter related with nature. It develops the feeling of environmental protection and we utilize the nature, with the sense of nature' sustainability "Ten Tyakten Bhunjeetha" is an example to be practiced for sustaining the planet.

Now the question is what should be the method of providing Vedic education. Now-a-days society has changed. It will not be possible to educate students in the traditional gurukul system. This is the age of science and technology. We will have to apply the Vedic knowledge in a new perspective. We should try to make education value added from primary school level. It is also necessary to make curriculum inter disciplinary as it should be knowledgeable and value added. We are living in the globalization era., Vedas provide a systematic way to live and meet life's goal by considering the entire planet as a family, i.e., "Vashudhav Kutumbkam". That was the first pronouncement of globalization. To achieve a common goal we should be together, think together, and work together, as propounded in the Vedic texts.

OM SAHA NAAVAVATU SAHA NAU BHUNAKTU SAHA VIIRYAM KARAVAAVAHAI TEJASVI NAAVADHIITAMASTU MAA VIDHISSAAHAI"

Thus it is important to make education system practical, inter disciplinary and value added. This would be the best method to make society and culture civilized. AS RADHAKRISHNAN said that "a civilization is not built of bricks, steel and machinery it is built with men, their quality and character. So true aim of education is to developing the body and in soul all the beauty and all the perfection of which they are capable". This paper will highlight ancient way of education especially Vedic tradition to solve current and future problems.

वेद भारतीय संस्कृति के प्राचीनतम ग्रन्थ माने जाते हैं। वेद ज्ञान के अथाह भण्डार हैं। वेदों का ज्ञान एवं आचरण जीवन को सुसंबद्ध एवं नैतिक रूप से जीने की महत्वपूर्ण कुंजी है। इस प्रकार वेद हमें एक सफल तथा वास्तविक जीवन जीने हेतु मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली पूर्णतया वैदिक ज्ञान आधारित शिक्षा प्रणाली थी। यह न केवल हमें कोरा ज्ञान प्रदान कराती थी। अपितु जीवन को अत्यधिक व्यवहारिक एवं सकारात्मक मनोभावों से युक्त कर वास्तविक लक्ष्य का मार्ग दर्शन कराती थी। वस्तुतः मानव जीवन के दो पक्ष हैं बाह्य पक्ष एवं आन्तरिक पक्ष। बाह्य पक्ष भौतिक जीवन से सम्बन्धित होता है। भौतिक सुख ही इस पक्ष का ध्येय होता है। आन्तरिक पक्ष का भौतिक साधनों या सुखों से कोई सम्बन्ध नहीं होता। वस्तुतः जीवन का आन्तरिक पक्ष आध्यात्मिक पक्ष कहा जाता है जिसका लक्ष्य आत्मोत्सर्ग करना होता है। आत्मोत्सर्ग की अवस्था नैतिक मूल्यों एवं नीतिनिष्ठ आचरणों द्वारा आत्म अवस्थित होकर व्यष्टि चेतना का समष्टि चेतना के प्रति आह्वान है। इस विचार की ध्वनि वैदिक साहित्य में 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे'[1] के रूप में दिखाई पड़ती है।

वैदिक शिक्षा की प्रमुख विशेषताएँ निम्न रूप में अंकित की जा सकती हैं– वैदिक शिक्षा प्रणाली की प्रमुख विशेषता इस रूप में है कि यह मानव व्यक्तित्व के दोनों पक्षों को सन्तुष्ट करती है। वैदिक शिक्षा इस प्रकार से स्वयं में एक सम्पूर्ण व्यवस्था थी। वह छात्र को जीवन की प्रत्येक स्थिति के लिए तैयार करती थी तथा उसके व्यक्तित्व का सर्वतोन्मुखी विकास करती थी। बालक का शरीर, मन, बुद्धि अध्यात्मक सभी शिक्षा द्वारा परिष्कृत किए जाते थे। गुरू के घर या आश्रम में रहकर बालक वहाँ के आवश्यक कार्यों का सम्पादन कर प्रायोगिक ज्ञान प्राप्त करता था तथा गुरू के निकटतम सम्पर्क तथा अन्तेवासित्व के माध्यम से गुरू के आदर्श चरित्र का अनुकरण कर चरित्र निर्माण करता था।

- 'सा विद्या या विमुक्तये''[2] वैदिक कालीन शिक्षा का प्रमुख ध्येय था, जिसमें आत्माभ्युदय सम्बन्धित वैयक्तिक गुणों के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था।
- उल्लेखनीय है कि यहाँ पर मुक्ति केवल मोक्ष के ही अर्थ में नहीं है। यह मुक्ति व्यवहारिक जीवन से भी सम्बन्धित है। व्यवहारिक जीवन में अज्ञान के वशीभूत होकर हम कुप्रवृत्तियों (क्रोध, मान, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार इत्यादि) में ही उलझे रहते हैं। विद्या अर्थात् ज्ञान प्राप्ति के बाद हम इन कुसंस्कारों से भी मुक्त होकर अभ्युदय के कार्यों में लगते हैं तथा अन्ततः निःश्रेयस को अंगीकार करते हैं।
- वैदिक कालीन शिक्षण व्यवस्था में मूल संस्कृति के संरक्षण व संवर्द्धन के लिए विशेष प्रयास किए जाते थे, जिसके लिए विशेषतः वैदिक साहित्य, दर्शन, व्याकरण इत्यादि पढ़ाए जाते थे। ''यज्ञों वै श्रेष्ठतम् कर्म'' के मतानुसार कार्यानुभव की प्रणाली पर विशेष ध्यान दिया जाता था।
- छात्र के नैतिक उत्थान के लिए आध्यात्मिक वातावरण का सृजन किया जाता था जिसके लिए यज्ञानुष्ठान इत्यादि को शिक्षणाभ्यास की प्रक्रिया में महत्व दिया जाता था। आत्मिक उत्थान के साथ–साथ स्वास्थ्य शिक्षा की ओर ध्यान देते हुए व्यक्ति के सामाजीकरण का प्रयास किया जाता था। जैसा कि ''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः'' इस श्रुति वाक्य के द्वारा महर्षि ने सभी प्राणियों का सुख, निरोगी काया, कल्याणप्रद पदार्थ तथा समस्त दुःखों के विनाश के लिए सृष्टिकर्त्ता परब्रह्म परमेश्वर से प्रार्थना की है।
- मानवता की अभिवृद्धि के लिए विश्रंखलित समाज को मालाकार में गुम्फित करने के उद्देश्य से मैत्री, सदाचार, उच्चविचार, नैतिकता, दया, करूणा तथा अहिंसा का प्रशिक्षण आध्यात्मिक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत दिया जाता था। इस संदर्भ में वैदिक ऋषियों की अवधारणा थी कि वैयक्तिक स्वतंत्रता तथा मानवीय समानता की उदात्त भावना के बिना उच्च आदर्शों वाले समाज का निर्माण सम्भव नहीं है। इसके लिए वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था में धार्मिक शिक्षा को प्रधानता प्रदान की गयी।
- ''माता भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः'' इस युक्ति के द्वारा वैदिक ऋषियों ने सामाजीकरण की भावना से राष्ट्रोन्नयन में योगदान का उपदेश दिया है। इस प्रकार के युक्तियों के माध्यम से वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण के प्रति मानवीय कर्त्तव्यों का मानवीयकरण एवं मानवीय सम्बन्धों की भावनाओं के साथ जोड़ने का प्रयत्न किया है।

वैदिक शिक्षा का प्रयोजन :

व्यक्तित्व विकास– सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की अनुभूति मानव जीवन का सर्वोत्कृष्ट लक्ष्य है, जहाँ तक पहुँचने के लिए मन्त्रदृष्टा ऋषियों ने अपौरुषेय शब्दावली द्वारा मानव जाति के लिए श्रेष्ठ कर्मों के अनुष्ठान का उपदेश दिया है। ईप्सित फल की प्राप्ति के लिए विभिन्न अनुष्ठानों के माध्यम से मानव आध्यात्मिक, आधिभौतिक व आधिदैविक कार्यक्षेत्र में प्रवेश कर शक्ति संचय द्वारा अपनी योग्यता को बढ़ाने का प्रयास करता है। प्रयास की इस श्रंखला में आध्यात्मिक कार्यक्षेत्र को वरीयता देते हुए शारीरिक अंगों के समविकास की ओर विशेष ध्यान दिलाया है। ऋषियों ने सम विकास के सिद्धान्त के आधार पर शरीर की स्थूल व सूक्ष्म शक्तियों को विकसित करने को प्रथम कर्त्तव्य बतलाया है।

आचरण की शुद्धता– व्यक्ति के वैयक्तिक विकास पर आचार–विचार व खान–पान का विशेष प्रभाव पड़ता है। इसलिए आचरण की शुद्धता के लिए यम, नियम इत्यादि की विवेचना की गयी है। महर्षियों ने स्थूल शारीरकि शक्ति तथा सूक्ष्म आत्मशक्ति को समविकास के भाव से सत्कार्य में प्रवृत्त करने हेतु चोरी न करना, व्यभिचार न करना, ब्रह्महत्या न करना, गर्भपात न करना, सुरापान न करना, पाप होने पर असत्य बालकर उसे न छिपाना, दुराचार न करना इत्यादि मर्यादाओं के अनुरूप मानव आचरण का निर्देश दिया है।

आध्यात्मिक प्रशिक्षण– मानव का साध्य तत्व वैयक्तिक, सामाजिक तथा जागतिक शक्ति है। वैयक्तिक शक्ति से अध्यात्मभाव की, सामाजिक शक्ति से अधिभौतिक भाव की तथा जागतिक शक्ति से अधिदैविक भाव की अभिवृद्धि होती है, जिसमें आध्यात्मिकता का पुट सन्निहित रहता है। आध्यात्मिक उन्नति होने से व्यक्ति सत्य तथा वास्तविकता की ओर अग्रसर होता है। आध्यात्मिक उन्नति कर ही व्यक्ति अपनी व्यष्टि चेतना का समष्टि चेतना में लय करता है।

शारीरिक सम्पुश्टता–शरीर, मन तथा हृदय का समाहार ही मानव है। इसमें हृदय तीसरा परन्तु परमात्म तत्व की अनुभूति से भक्ति स्थल माना गया है। मन तथा शरीर कार्यस्थल कहे गए हैं। इसलिए ऋषियों ने शरीर को हृष्ट–पुष्ट, दृढ़ तथा शक्तिशाली बनाने का निर्देश देकर संगठनात्मक शक्ति के स्वरूप का बोध कराया है। सभ्यता तथा संस्कृति के विकास में अनेक संस्कृत ग्रन्थों में उद्घोष है– ''शरीमाध्यममेन हि खुल धमसाधनम्।''

अनुशासनात्मक जीवन– ''सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यान्मा प्रदमदः''[3] सत्यनिष्ठ अभिव्यक्ति, धर्माचरण के अनुरूप आचार–विचार तथा व्यवहार के साथ–साथ अध्ययन के प्रति निश्छल भाव वेदाध्यायी का परम कर्त्तव्य था, जिसमें अनुशासनात्मक जीवन पद्धति के बीच अंकुरित होते दिखाई देते थे। अनुशासन में आन्तरिक व बाह्य दो विकास हेतु आन्तरिक अनुशासन महत्वपूर्ण था। अनुशासन ही सामाजिक अनुशासन का आधार है।

सामाजिकता का विकास– जागतिक संसार में व्यक्ति के स्वतंत्र अस्तित्व का कोई महत्व नहीं है। जबसे मानव ने समुदाय, समाज व राष्ट्र के अभिन्न अंग के रूप में स्वयं को समाहित कर लिया है तब से उसका स्वयं का अस्तित्व समाप्त हो गया है। वैदिक शिक्षा का प्रमुख प्रयोजन व्यक्ति की व्यष्टि चेतना को सामाजिक स्तर से तादात्म्य कराकर अभ्युदय की ओर अग्रसारित करना है।

राष्ट्रानुराग– विश्व में राष्ट्रवाद की संकल्पना का प्रमाणित उल्लेख वैदिक संहिताओं में प्राप्त होता है। जिसमें ''माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः।''[4] के उद्घोष द्वारा राष्ट्र और राष्ट्रीयता के पारस्परिक सम्बन्धों को स्पष्ट करने का प्रयत्न है। सम्बन्धों की इस परिचर्चा द्वारा मानव में एकाकी जीवन से विरक्ति तथा जीवन मूल्यों के संरक्षण के अभाव ने चिन्तन की नई विचारधारा को जन्म दिया। एतदर्थ भयाकुल हुए मानव ने जीवन मूल्य के संरक्षण हेतु राष्ट्रवाद के रूप में संघ शक्ति को सहायक माना। ''गणेन मा रिषण्यः''[5] ऋचा द्वारा ऋषि ने संघ में गण में रहने से तुम्हारा नाश नहीं होगा, ऐसी परिकल्पना की है।

वैदिक शिक्षार्थ प्रयोजन के पश्चात् अब आधुनिक शिक्षा प्रणाली का स्वरूप, इसका उद्देश्य तथा मानव जीवन के सर्वांगीण विकास में इसी उपयोगिता का वर्णन अपेक्षित है।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली, वैदिक शिक्षा पद्धति से अलग है। वर्तमान में औद्योगीकरण के तीव्र विकास के कारण शिक्षा प्रणाली व उसका लक्ष्य दोनों ही परिवर्तित हो गए हैं। आज की शिक्षा पद्धति का जो प्रमुख दोष उभरकर सामने आया है वह है इसकी एक आयामी स्वरूप। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि मानव व्यक्तित्व के मूलतः दो पक्ष हैं– बाह्य (भौतिक पक्ष), आन्तरिक (आध्यात्मिक पक्ष) बाह्य पक्ष का सम्बंध भौतिक उपलब्धियों में है, जैसे– विज्ञान व प्रौद्योगिकी, जबकि आन्तरिक्ष पक्ष का सम्बंध मूल्यों से है। आज की शिक्षा प्रणाली केवल बाह्य पक्ष पर ही बल देती है इस प्रकार आन्तरिक पक्ष उपेक्षित होता जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप शिक्षा के बाह्य विन्यास तो हो रहा है परन्तु आन्तरिक व्यतिक्रम उत्पन्न हो रहा है। इस प्रकार आज की शिक्षा प्रणाली न तो मूल्य आधारित है, न ही मूल्य रहित, अपितु मूल्य निरपेक्ष है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली, इस प्रकार से मूल्यक्षरण का एक प्रमुख कारण है।

तीव्र औद्योगीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप एक उपभोक्तावादी समाज का निर्माण हुआ है। यह उपभोक्तावादी समाज, आवश्यकता आधारित समाज न होकर लोभ आधारित समाज होता है। आवश्यकता की तो सीमा है पर लोभ की कोई सीमा नहीं है। लोभ के वशीभूत व्यक्ति अपना विवेक खो देता है तथा इस प्रकार वह व्यक्ति तथा प्रकृति दोनों का दोहन प्रारम्भ कर देता है। इस संदर्भ में महात्मा गाँधी का यह कथन काफी प्रासंगिक है– यह पृथ्वी सभी की जरूरतों को पूरा करने के लिए तो पर्याप्त है परन्तु सभी के लोभ को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। (This Earth is enough to fulfill the needs of all but not the greeds of all.) लोभ आधारित समाज में तीन प्रमुख समस्याएँ उभर कर सामने आती हैं।

1. अहंकेन्द्रित भाव का विकास।
2. स्वकेन्द्रित समाज का निर्माण।
3. व्यक्ति को संवेदनाहीन बना देना।

इन सभी समस्याओं का दुष्परिणाम यह होता है कि समाज में कुप्रवृत्तियाँ चरम पर हो जाती हैं। यद्यपि इन्हें रोकने के लिए राज्य स्तर पर कठोरतम कानून बनाए जाते हैं परन्तु कानून भी इन्हें रोकने में असमर्थ हैं। क्योंकि ये सारी समस्याएँ बाह्य न होकर आन्तरिक होती हैं। जिसका सम्बन्ध मानवीय मूल्यों से है। इस प्रकार की प्रवृत्ति समाज में मूल्य संकट की समस्या उत्पन्न करती है।

वस्तुतः वर्तमान सामाजिक समस्याओं का उपर्युक्त समाधान वैदिक शिक्षा प्रणाली में उपलब्ध है। वैदिक शिक्षा प्रणाली जो मूल्य आधारित प्रणाली है संपोष्य विकास को बढ़ावा देती है। संपोष्य विकास का अर्थ है कि बाह्य व आन्तरिक दोनों पक्षों में संतुलन। मानव मशीन न होकर एक भावात्मक प्राणी है जिसका सम्बंध मानवीय मूल्यों से है। जैसे– प्रेम, दया, करूणा, सहिष्णुता, समाभाव, परोपकार इत्यादि। यह भावात्मक पक्ष ही हमें मानवीय मूल्यों के प्रति सजक एवं संवेदनशील बनाता है।

शिक्षा ही किसी समाज की भावी स्वरूप व दिशा का निर्धारक होता है। अतः आवश्यकता है कि समाज का स्वरूप नैतिक व सुव्यवस्थित हो, बच्चों को मूल्य आधारित शिक्षा प्रदान की जाय। उपर्युक्त वर्णित लोभ केन्द्रित समाज, अहंकेन्द्रित समाज इत्यादि समस्या के समाधान वैदिक ऋचाओं में उपस्थित हैं–

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा, मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।[6]

''अर्थात् इस गतिशील जगत में जो कुछ भी है, वह ईश्वर या ईशावासमय है। अतः त्यागपूर्वक भोग करो लालच मत करों, यह धन किसका है ?''

वर्तमान में समाज के स्वार्थी, स्वकेन्द्रित होने की समस्या तथा अपने व पराए का भेद समाप्त हो इसके लिए वैदिक ऋषियों ने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार सम्पूर्ण पृथ्वी ही परिवार के रूप में परिभाषिता की गयी है।

अयं निजः परोवेतिगणना लघु चेतसाम्।
उदारचरित्रानाम् तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।[7]

अर्थात् यह अपना है तथा यह दूसरे का ऐसा विचार तुच्छ विचारधारा वाले लोग करते हैं। उदारचरित्र लोगों के लिए तो सम्पूर्ण पृथ्वी ही एक परिवार के समान है। उल्लेखनीय है कि वर्तमान वैश्विक परिदृश्य जिसे भूमण्डलीकरण का युग कहा जा रहा है, के लिए ऐसी भावना का विकास एक समरसतापूर्ण भविष्य को उद्घाटित करता है। वर्तमान में जब वैश्विक स्तर पर आगे बढ़ने की होड़ सी मची हुई है, तथा विश्व के देश राष्ट्रवाद तथा भूमण्डलीकरण के द्वन्द्व में फँसे हुए हैं तो इस समय विश्व बन्धुत्व तथा वसुधैव कुटुम्बकम् रूपी आदर्श निःसन्देह इन समस्याओं का समुचित हल प्रदान कर सकते हैं। वेदों में महर्षियों ने सबको साथ लेकर चलने, सबके विकास व सबके उत्थान की अवधारणा विकसित की है।

ऊँ सहनाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्विनाधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।। ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।[8]

अर्थात् हे प्रभु हम सब की रक्षा करें। हम सबका पोषण करें। हम सबको शक्ति प्रदान करें। हमारा ज्ञान तेजमयी हो तथा हम किसी से द्वेष ना करें। साथ ही साथ वर्तमान में एक प्रमुख समस्या स्वयं को श्रेष्ठतर के रूप में स्थापित करने की है। इससे कहीं न कहीं अन्य विचारों के प्रति हमारे मन में हीन भावना का जन्म होता है। वैदिक शिक्षा द्वारा हम एक श्रेष्ठ मार्ग प्राप्त करते हैं कि हमें सदैव अच्छे विचारों को ग्रहण करने के लिए तैयार रहा चाहिए तथा उसे ह्रदयंगम करते हुए अभ्युदय हेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए।

ऊँ असतो मा सद्गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मामृतम् गयम।।

अर्थात् हमें असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो। हमें मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो।

वर्तमान में युवाओं के समक्ष एक बड़ी समस्या मानसिक उद्विग्नता का है। आज के भौतिक युग में युवा असन्तोष, अराजकता एवं किकर्त्तव्यविमूढ़ता के जाल में फँसा हुआ है। आज युवाओं में धैर्य की कमी देखी जा रही है। जिसके कारण युवा अपना सन्तुलन खो बैठा है तथा आत्महत्या जैसे जघन्य अपराध को अपना हथियार बना जीवन लीला को समाप्त कर बैठ रहा है। इसलिए वैदिक ऋषियों, वैदिक शिक्षा व्यवस्था में चित्त की एकाग्रता के लिए यौगिक साधना पर भी बल दिया है। ''योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः''[9] अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है। इस सम्बन्ध में उनकी धारणा रही है कि बिना चित्त को एकाग्र किए व्यक्ति अपनी अवस्था में स्थित नहीं हो सकता। ''तदा द्रष्टः स्वरूपेऽवस्थानम्''[10] इस प्रकार मानसिक व्याधियों से छुटकारा प्राप्त करने हेतु भी वैदिक ऋषियों ने चित्त को योग के माध्यम से शान्त रखने की बात कही है।

आज के समय में पर्यावरणीय संकट एक अति विनाशकारी संकट के रूप में सामने आया है। वस्तुतः इस संकट से तो जीव सभ्यता के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न खड़ा हो गया है। आधुनिक काल का प्रारम्भ औद्योगीकरण व विज्ञानीकरण के साथ हुआ। इस समय प्रकृति के विदोहन में कई गुना तक वृद्धि हो गयी। प्राकृतिक घटक जो अब तक मात्र सुरक्षा एवं सम्बल की तरह देखे जाते थे, अब वे संसाधन के रूप में सम्पदा के स्रोत दिखने लगे क्योंकि विज्ञान इनके विदोहन के लिए नए संसाधन जुटा देता है तथा उद्योग इन्हें संशोधित कर सम्पदा का रूप दे देता है।

औद्योगिक और प्रौद्योगिक क्रान्तियों के फलस्वरूप जिस भौतिकवादी संस्कृति का प्रादुर्भाव हुआ, उसकी वैचारिकी परिणति अचानक से अर्थवाद एवं उपभोक्तावाद में हो गयी।

इन सब प्रक्रियाओं ने पर्यावरण प्रदूषण को जन्म दिया। विज्ञान के माध्यम से मानव ने वस्तुजगत के रूपान्तरण की जो प्रविधि विकसित की उससे न केवल वस्तु का रासायनिक परिवर्तन हुआ अपितु रासायनिक उच्छिष्ट के रूप में एक नया संकट भी खड़ा हो रहा है। सही मायने में भौतिक, जैविक एवं रासायनिक स्तर पर इतना तीव्र परिवर्तन होने से समस्त पृथ्वी ही भौगोलिक पारिस्थितिकीय असन्तुलन से ग्रस्त हो जाती है।

इन सब बातों के परिप्रेक्ष्य में यह महत्वपूर्ण है कि हम मानव तथा प्रकृति के मध्य सम्बन्धों की स्थिति को जाने। वैदिक वाङ्मय का सम्पूर्ण वातावरण ही प्रकृति से आप्लावित है। वेदों के रचयिता, मन्त्रद्रष्टा ऋषियों का परिवेश, परिधान, भोजन, दिनचर्या इत्यादि सभी प्राकृतिक हैं। उनके देवता भी प्राकृतिक हैं। उनके लिए पृथ्वी माता हैं, पर्जन्य पिता हैं, सूर्य आत्मा हैं, जल व वनस्पतियाँ मित्र हैं।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।
पर्जन्यः पिता स उ न पिपर्तु।। — अथर्ववेद 12/1/2

यह साधारण मन्त्र ऋषियों की प्रकृति के प्रति गहरी आत्मीयता को प्रकट करता है। अधिकांश प्रकृतिकपरक मन्त्र ऐसे ही सरल भावों से भरे हैं जिनमें प्रकृति के प्रति समर्पण एवं उससे समन्वय का संगीत स्वर गुंजित होता रहता है। वैदिक वाङ्मय में प्रकृति के प्रति प्रतिबद्धता को हम सर्वाधिक सशक्त रूप में 'ऋत' के सिद्धान्त में पा सकते हैं। वैदिक युग में ऋत, सत्य का ऐसा रूप है जो नैतिक एवं प्राकृतिक जगत में समानान्तर रूप में प्रवाहित है। मानव की सत्यनिष्ठा प्रज्ञा को 'ऋतम्भरा' कहा गया है तथा प्रकृतिचक्र की विधायिका विभाजिका को 'ऋतु' की संज्ञा दी गयी है। यहाँ पर आकर नैतिक व प्राकृतिक जीवन में पूर्ण तादात्म्य हो जाता है।[11]

इस प्रकार से यदि हम बच्चों में वैदिक शिक्षा का प्रवाह करते हैं तो निश्चित रूप से इन श्रेष्ठ सिद्धान्तों के आधार पर वे प्रकृति का भी स्वतः साध्य मूल्य समझ पाएँगें तथा आगे आने वाले समय में प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हुए एवं संपोषणीय विकास को ध्यान में रखते हुए विकास पथ पर अग्रसर होंगे। इस संदर्भ में एक और बात रेखांकित करने योग्य है कि पर्यावरण का संकट केवल विकास से ही नहीं, बल्कि अविकास से भी जुड़ा है। पर्यावरणीय ह्रास के लिए तीव्र औद्योगिक विकास ही नहीं, ग्रामीण विकास का अभाव भी उत्तरदायी है। कृषि के लिए होने वाला वृक्ष विनाश तथा जल विदोहन औद्योगिक विकास से होने वाली इस क्षति की तुलना में काफी अधिक था।

अब प्रश्न है कि वर्तमान में वैदिक शिक्षा का स्वरूप क्या हो? क्या पूर्णतया वैदिक शिक्षा एवं पद्धति को वर्तमान में लागू किया जा सकता है ? स्पष्टतः इसका निषेधात्मक उत्तर ही होगा। वर्तमान में शिक्षा एवं पद्धति को गुरूकुल शिक्षा प्रणाली के आधार पर देना सम्भव नहीं है परन्तु प्रारम्भिक स्तर से ही शिक्षा के पाठ्यक्रम में वैदिक वाङ्मय के महत्वपूर्ण शिक्षाओं को सम्मिलित करना काफी लाभदायक रहेगा। बच्चों में सैद्धान्तिक शिक्षा प्रदान करने के साथ ही साथ उसका व्यवहारिक अनुप्रयोग भी जीवन के सर्वांगीण विकास की महत्वपूर्ण कड़ी है। यह विशेषता वैदिक शिक्षा प्रणाली का आधार रही है। वैदिक पद्धति में वर्णित यौगिक क्रिया, नैतिक विचार, प्रकृति के प्रति कृतज्ञता की भावना, धर्म का स्वरूप, राष्ट्रवाद की भावना इत्यादि को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाकर प्रारम्भ से ही बच्चों का बाह्य तथा आन्तरिक दोनों विकास करना वर्तमान शिक्षा पद्धति का लक्ष्य होना चाहिए तथा वैदिक शिक्षा का वर्तमान में इस रूप में सदुपयोग किया जा सकता है। जैसा कि डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा– ''एक सभ्यता का निर्माण ईंटों, इस्पात तथा मशीनरी से नहीं होता। यह मानवों से एवं उनके चरित्र व विशेषता से निर्मित होती है। अतः शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य शरीर एवं आत्मा में समस्त सुन्दरता एवं पूर्णता का विकास करना है।''[12]

वैदिक शिक्षा का व्यवहारिक अनुप्रयोग :

वैदिक साहित्य के सिद्धान्त निःसन्देह व्यक्ति के व्यवहारिक जीवन को उत्कृष्ट बनाने में सहायक हैं। आजकल नीतिशास्त्र का क्षेत्र इतना विस्तृत हो चुका है कि व्यवसाय, चिकित्सा, प्रशासन इत्यादि से समबन्धित विषयों पर नैतिक चर्चा प्रमुखता से की जा रही है। अब प्रश्न है कि वैदिक वाक्य 'सत्यं वद' को क्या पूर्णतया व्यवसाय तथा चिकित्सा के क्षेत्र में भावी रूप से प्रयोग कर सकते हैं? यद्यपि व्यवसाय में पूर्ण सत्यता का पालन नहीं किया जा सकता परन्तु व्यवसायी इस संदर्भ में यदि नैतिकता का पालन करे कि वह किसी ऐसी वस्तु का मिलावट इत्यादि न करे जिससे कि किसी को हानि उठानी पड़े या पर्यावरण पर दुष्प्रभाव हो, तो उस व्यवसायी के कार्य में 'सत्यं वद' का व्यवहारिक अनुप्रयोग इस रूप में होगा। इसी प्रकार चिकित्सक यदि पूर्णतया सत्य बोलता है तथा बीमार को उसकी बीमारी तथा उसके भयंकर परिणामों के विषय में अवगत कराता है तो यह रोगी के लिए सही नहीं कहा जा सकता परन्तु चिकित्सा की नैतिकता कहती है कि ऐसी दवा का निर्माण न हो जो मानवता के विरुद्ध हो, या किसी ऐसी तकनीकी पद्धति का प्रयोग न किया जाय जो सामाजिकता के विरुद्ध हो। जैसे– माँ के गर्भ में लिंग का पता लगाने की विधि के प्रयोग से पुत्र की चाह रखने वाले लोग पुत्री को गर्भ में ही मार डालते हैं जो चिकित्सकीय नैतिकता के सर्वथा विरुद्ध है। इस प्रकार वैदिक शब्दों एवं वाक्यों का वर्तमान में हम अपने कार्यों में व्यवहारिक अनुपालन कर अपनी सभ्यता की विकासगति को और आगे ले जा सकते हैं। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि समाज के श्रेष्ठी जन जिन्हें इन सिद्धान्तों के विषय में ज्ञान है, वे इन्हें अपने व्यवहार में अपनाकर समाज के लिए मार्गदर्शक के रूप में सामने आएँ जिससे अन्य लोग भी इन सिद्धान्तों के व्यवहारिक अनुप्रयोग के लाभों को जानते हुए इसका अनुकरण कर सकें।

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि मानव व्यवहारों के परिवर्तन में शिक्षणाभ्यास की प्रक्रिया का अभूतपूर्व योगदान है, जिसके कारण अनादिकाल से लेकर अद्यतन के विभिन्न दार्शनिकों ने सामाजिक आवश्यकतानुसार शिक्षा तत्वों के विवेचन द्वारा मानव जीवन में उसकी उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। ''शिक्षा ही जीवन है तथा जीवन ही शिक्षा है।''[13] दोनों के इस अभेद सम्बंध को नकारा न जाने के कारण ही ''सा विद्या या विमुक्तये'' अथवा ''सा विद्या या ब्रह्मगतिप्रदा'' के द्वारा विद्या अथवा ज्ञान के महत्व को पूर्वाचार्यों ने विवेचित किया है।

संदर्भ :

1. चरक संहिता
2. श्री विष्णुपुराणे प्रथमस्कन्धे एकोनविंशोऽध्यायः
3. तैत्तिरीययोपनिषद्–1/11
4. अथर्ववेद– 12/1/12
5. ऋग्वेद– 7/9/5
6. ईशावास्योपनिषद–1/1, मोतीलाल जलान, गीताप्रेस गोरखपुर
7. हितोपदेश
8. कृष्णयजुर्वेद
9. पातंजल योग–प्रदीप– 1/2
10. वहीं, 1/2
11. भारतीय शिक्षा दर्शन– सरयू प्रसाद चौबे, दि मैकमिलन क0 आफ इण्डिया, दिल्ली– 1975
12. विश्व चिन्तन के चार अध्याय– डॉ0 कृष्णा कान्त पाठक
13. वैदिक शिक्षा पद्धति– डॉ0 भास्कर मिश्र, MPVVP उज्जैन